सोचने की प्रक्रिया का एक अध्ययन
आचार्य काका साहब कालेलकर के साथ एक साक्षात्कार

सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी

दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (1885-1981), जिन्हें काका कालेलकर के नाम से जाना जाता है, एक भारतीय स्वतंत्रता कार्यकर्ता, पत्रकार, समाज सुधारक और महात्मा गांधी के दर्शन शास्त्र और विधियों के प्रख्यात अनुयायी थे। वे भारत के प्रतिष्ठित विचारकों और लेखकों में से एक थे। उन्होंने विनम्रता से मुझे साक्षात्कार की अनुमति दी। कुछ प्रश्नोत्तर सर्जनात्मकता के विद्यार्थियों के लिए रुचिकर होंगे। इसलिए यह साक्षात्कार प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रश्न: कभी-कभी बहुत तेज़ी-से विचार आते हैं और लगता है उन्हें लिख लेना चाहिए क्योंकि वह क्षण फिर आए न आए। क्या आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ है?

उत्तर: हाँ, ऐसे क्षण बहुत अमूल्य होते हैं। मुझे विचार आता है, पर हमेशा किसी सन्दर्भ में। यह मेरी गहन सोच या किसी विशेष स्थिति से उत्पन्न हो सकता है। यह आवश्यक होता है कि विचार को दो प्रकार से लिखा जाए:

- स्थिति, प्रवृत्ति या चिन्तन के सन्दर्भ में जो उस विचार को जन्म देते हैं;
- सार्वभौमिक अनुप्रयोग के रूप में जिसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किया जा सके।

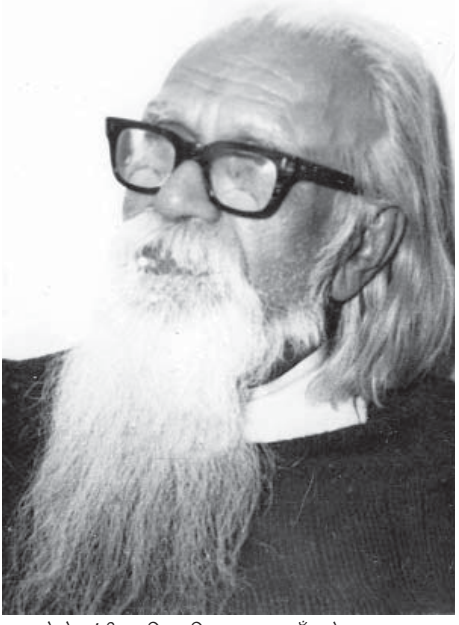

यह फोटो गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, जलगाँव से साभार।

जब अवसर चला जाता है और उसे आज़माने वाली भट्टी भी गर्म नहीं रह जाती, तब विचार याद नहीं रहता। फिर उसे वापस लाना कठिन होता है। जब फिर से कभी समरूप या उपयुक्त स्थिति उत्पन्न होती है, तब यह अपने पुराने बल के साथ वापस आ जाता है। यह विचार इतना ताकतवर होता है कि हमेशा के लिए खो नहीं सकता। पर संकोचवश, कुछ समय के लिए स्वयं को छुपा ज़रूर लेता है।

प्रश्न: कभी-कभी ऐसा होता है कि हमारे मन में कोई विचार आ जाता है जिसे हम विकसित करना स्थगित कर देते हैं, और यह हमारे दिमाग के किसी कोने में चला जाता है। वहाँ यह विकसित होकर एक दिन परिपक्व हो जाता है। क्या आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ है?

उत्तर: इसका उत्तर आंशिक रूप से मैंने पहले दिया है। मैंने कभी किसी विचार को किताब के रूप में लिखने की कोशिश नहीं की। मुझे विचार को विभिन्न क्षेत्रों में लागू करने की आदत है, और इस अप्रत्याशित प्रयोग से मेरे

मित्र अक्सर अचम्भित होते हैं। मज़ाक में, मैं उन्हें जवाब देता हूँ कि उपमा और रूपक का महत्व उनके चौंक जाने से होता है। मेरा दिमाग एक-साथ कई स्तरों पर काम करता है जिसके कारण एक विचार को कई विपरीत विचार और अनुभव चुनौती देते हैं। तब मुझे सिन्थेसिस यानी संश्लेषण करना पड़ता है। मैंने स्वयं को संश्लेषण में काफी निपुण पाया है, क्योंकि मुझे किसी विचार से प्यार नहीं होता, बल्कि मुझे व्यापक जीवन से प्यार है। जीवन की समग्रता के प्रति निष्ठा संश्लेषण में मदद करती है। आप इसे किसी विचार का परिपक्व होना कह सकते हैं।

यह मेरा निरन्तर अनुभव रहा है कि विचार न केवल चेतन स्तर पर परिपक्व होते हैं, बल्कि वे कभी-कभी अवचेतन में बहुत बेहतर रूप से परिपक्व होते हैं। चेतन स्तर समुद्र की सतह के समान होता है जबकि अवचेतन उसकी गहराई के समान। इसीलिए अवचेतन में मौलिक विचारों का बेहतर विकास होता है।

प्रश्न: कुछ लेखक लिखने के लिए किसी विशेष मनोदशा, स्वास्थ्य की स्थिति या परिस्थिति के अनुकूल होने को तरजीह देते हैं। इस बारे में आपका क्या अनुभव रहा है?

उत्तर: मैंने बहुत-से लोगों से मनोदशा के बारे में सुना है, किन्तु मेरा अनुभव इसके एकदम विपरीत है। किसी विचार को विकसित करने या उसे लिखित रूप में लाने के लिए मुझे किसी विशेष मनोदशा, स्वास्थ्य की स्थिति या परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती है। मेरा मन हमेशा ताज़ा और तैयार रहता है, उस प्रेमी की तरह जो अपने प्रिय की उपस्थिति में प्रेम से ओत-प्रोत होता है।

किन्तु एक विशेषता मैंने अपने आप में पाई है। मेरी विचार प्रक्रिया और मेरा विचार विकसित करना काफी हद तक उस व्यक्ति पर निर्भर करता है जिससे मैं बात कर रहा हूँ या जिससे लिखवा रहा हूँ। आपको आश्चर्य होगा कि मैं कभी भी अपने हाथ से नहीं लिखता। मेरी उँगलियों में कोई खराबी नहीं है लेकिन जब मैं लिखवाता हूँ तब मेरा दिमाग सबसे अच्छा काम करता है। शिक्षाविद् उस गाय की तरह होता है जो बछड़े के माँगने पर दूध देती है। पहले मैं केवल उन्हीं लोगों से लिखवा पाता था जिनके साथ कुछ अपनापन था। अब मैंने इस कमज़ोरी पर काबू पा लिया है। फिर भी, अभी भी मेरी विचार प्रक्रिया उस व्यक्ति पर निर्भर करती है जिसे मैं सम्बोधित करता हूँ। मेरी व्यग्रता उस व्यक्ति को मेरे विचारों और धारणाओं को स्वीकार कराने की रहती है। सम्बोधित व्यक्ति ही मेरी एकमात्र चिन्ता बन जाता है।

प्रश्न: क्या आप किसी ऐसी स्थिति को याद कर सकते हैं जब किसी विशेष मुद्दे पर अधिकांश लोगों की

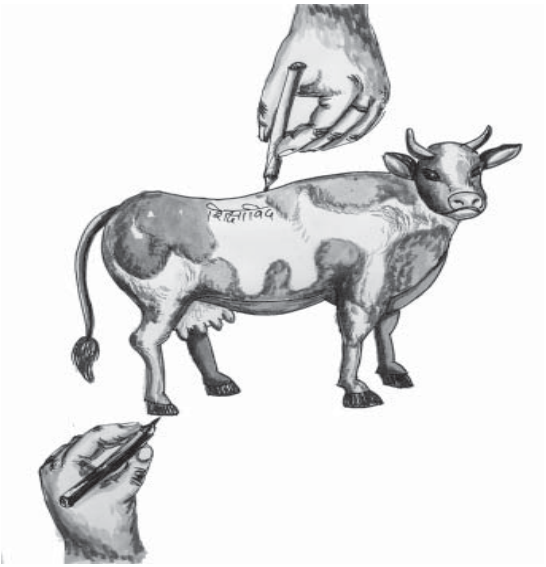

राय आपकी राय से अलग रही हो और आपने बिलकुल नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया हो, जिसके बारे में किसी ने सोचा भी न हो? क्या आप अपने बचपन का कोई ऐसा अनुभव याद कर सकते हैं?

उत्तर: बचपन में यह मेरे लिए सबसे शर्मनाक स्थिति थी, क्योंकि मैं अपने बड़ों की राय स्वीकार नहीं कर पाता था और उनके प्रति सम्मान के कारण अस्वीकार या विरोध भी नहीं कर पाता था जिसके कारण मुझे घुटन होती थी। बचपन में भी मैं अपने दृष्टिकोण के बारे में दृढ़ था।

प्रश्न: सर्जनात्मक सोच के कुछ प्रकार निम्नलिखित हैं:

1. किसी वस्तु या स्थिति का नया उपयोग खोजना
2. दोषों को देखना और सुधार का सुझाव देना
3. किसी दृष्टिकोण के निहितार्थ देखना
4. किसी विचार का विस्तार करना
5. एक क्षेत्र के विचार को दूसरे क्षेत्र में लागू करना

उपरोक्त में से आपकी सोच की प्रमुख विशेषता कौन-सी है? क्या आप कोई ऐसा अनुभव याद कर सकते हैं जो आपके द्वारा कही गई बातों को स्पष्ट कर सके?

उत्तर: जब मैंने बी.ए. में प्रवेश लिया तब अपने वैकल्पिक विषयों के रूप में तर्क और नैतिक दर्शन को चुना।

हमारे प्रोफेसर एक गम्भीर प्रकृति के व्यक्ति थे और अपने छात्रों में रुचि रखते थे। उन्होंने हमसे पूछा कि हमने इन विषयों को क्यों चुना। मैं गणित में अच्छा था और रैंगलर परांजपे से बहुत प्रभावित था। प्रोफेसर साहब को भी उम्मीद थी कि मैं गणित चुनूँगा।

मैंने अपने प्रोफेसर को जो उत्तर दिया वह इसलिए खास था क्योंकि वह मेरे लिए मौलिक था। मैंने कहा, "मैंने कुछ धार्मिक साहित्य और सन्तों के लेखन को पढ़ा है। मैंने तर्कवादी साहित्य भी पढ़ा है और सामाजिक सुधार में मेरी गहन रुचि है। इसलिए

मुझे गहराई से सोचने की आदत है। लेकिन मैं विभिन्न प्रकार की सोच का पता लगाना चाहता हूँ।"

मैंने इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया था। मैं कहना चाहता था कि मुझे जीवन के विभिन्न दृष्टिकोणों को समझकर एक व्यापक दर्शन विकसित करने में रुचि है। मुझे एक मास्टर आइडिया के सभी निहितार्थ निकालने में सक्षम होना चाहिए। यदि कोई एक क्षेत्र के बारे में कुछ कहता है, तो मुझे यह अनुमान लगाने में सक्षम होना चाहिए कि उसके विचार और दृष्टिकोण अन्य क्षेत्रों में क्या होंगे, यदि वह अपनी सोच पर स्थिर है। मैंने इस उम्मीद में दर्शनशास्त्र को चुना था कि वह मुझे जीवन के विभिन्न पहलुओं की स्पष्ट और व्यापक समझ बनाने में मदद करेगा।

दुर्भाग्य से, मैं जिन प्रोफेसर को उनके जीवन और सेवाओं के लिए सबसे अधिक सम्मान करता था, वे मेरे उत्तर के पूर्ण निहितार्थ को नहीं पकड़ पाए। उन्होंने बस इतना कहा, "तुम वही करो जो तुम्हें सही लगता है; लेकिन मैं तुम्हें पूर्वी और पश्चिमी दर्शन का अध्ययन व दोनों की तुलना करने की कोशिश की सलाह देता हूँ।"

उन्होंने जो सुझाव दिया, उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं थी लेकिन उनका दृष्टिकोण केवल विद्वता और थोड़ी-सी देशभक्ति का था। मुझे पता है कि मेरी इच्छा इससे ज़्यादा गहरी थी। मैंने उन सुझावों को वहीं छोड़ दिया, लेकिन मैं इस बातचीत को नहीं भुला पाया हूँ।

अब, आपके प्रश्न (1) के उत्तर में, हाँ, मैं किसी वस्तु या स्थिति का बेहतर उपयोग खोजने के लिए संघर्ष करता हूँ, लेकिन जब मेरे पास एक विचार होता है तब अन्य चीज़ें मुझसे बच निकलती हैं।

(2) मुझे लगता है कि दोषों को देख पाना और सुधार का सुझाव देना सभी के लिए सामान्य है, सिवाय उन लोगों के जो आदेश लेने और यंत्रवत् पालन के आदि होते हैं।

यात्रा करने, नए देशों और विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों को देखने के मेरे जुनून ने मुझे विचारों और स्थितियों को उच्च दृष्टिकोण से देखने में मदद की है। लोग इस तरह के सुधारों और मदद को पसन्द नहीं करते हैं, और इसलिए एक व्यक्ति को अपने सुझावों को अपने पास ही रखना पड़ता है। मुझे अक्सर समाज की नाराज़गी झेलनी पड़ी है, क्योंकि मैं अपने मन की बात अपने तक सीमित नहीं रख पाता हूँ।

(3) मैं सोचता हूँ कि किसी दृष्टिकोण के निहितार्थ को देखना सबसे महत्वपूर्ण है। कुछ निहितार्थ स्वतः ही एकाएक मेरे सामने उपस्थित हो जाते हैं और कुछ मेरे सामने तभी आते हैं जब मैं प्रतिकूल वातावरण में होता हूँ और तब मुझे संश्लेषण या

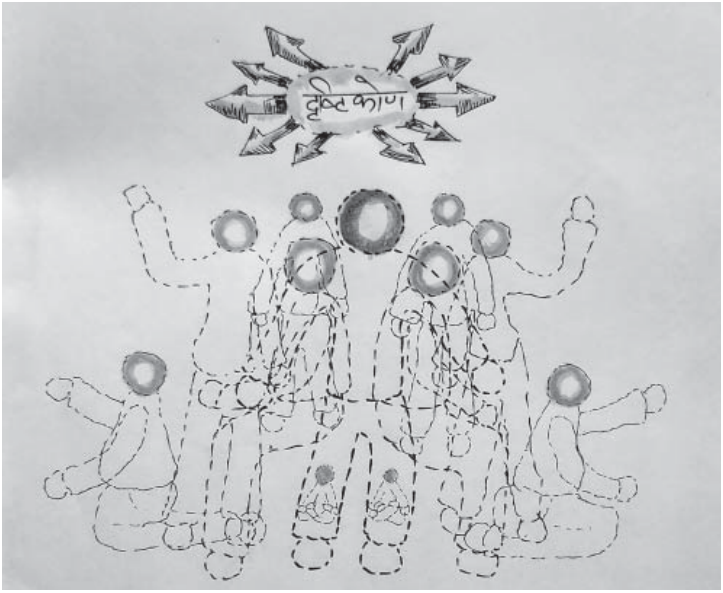

सामंजस्य के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

(4) किसी विचार का विस्तार करना हर योग्य शिक्षक का कर्तव्य है। सर्वप्रथम एक शिक्षाविद् होने के नाते मैं जीवन भर विचारों का विस्तार करता रहा हूँ। मेरी साहित्य शैली में जो आकर्षण है, वह भाषा और अभिव्यक्ति के प्रेम का परिणाम नहीं है, बल्कि आकर्षक तरीके से विचार के विस्तार करने की मेरी चिन्ता के कारण है।

व्याख्या

यह साक्षात्कार उस समस्या पर प्रकाश डालता है जिसका एक सर्जनात्मक व्यक्ति को सामना करना पड़ता है। टॉरेन्स (1962) ने अपने लेखन में बच्चे की सोच पर कम नियंत्रण रखने और उसके विचारों की अधिक प्रशंसा करने का दृढ़ता से अनुरोध किया है। इस सम्बन्ध में काका साहब ने जो कहा कि उन्हें बचपन में कैसा लगा जब उनके बुज़ुर्ग उन्हें समझने में असफल रहे, बहुत प्रासंगिक है। कॉलेज के दिनों में एक प्रोफेसर के साथ उनके अनुभव से पता चलता है कि जब काका साहब दर्शनशास्त्र के विभिन्न दृष्टिकोणों के एक नए संश्लेषण को प्राप्त करने के बारे में सोच रहे थे, तब उनके प्रोफेसर उनकी इस तीव्र इच्छा को समझने में असमर्थ रहे। पूर्वी और पश्चिमी दर्शन की तुलना

करने के लिए युवा कालेलकर को उनकी सलाह वही थी जो कोई भी शिक्षक आम तौर पर अपने छात्रों को देता। यह उस सन्दर्भ में काफी असंगत थी जिस सन्दर्भ में दी गई थी।

इस साक्षात्कार से काका साहब के सोचने और लिखने के तरीके का एक दिलचस्प पहलू सामने आया, जो उन लोगों को श्रुतलेख देने के बारे में था जिनके साथ उन्होंने एक तरह की आत्मीयता महसूस की। यदि किसी कारणवश इस आत्मीयता में कमी होती है तो उनके विचार भी प्रतिबन्धित हो जाते हैं। यह सर्जनात्मक सोच के भावनात्मक पहलू पर प्रकाश डालता है। महान विचारकों के जीवन के ऐसे कई उदाहरण हैं जो सर्जनात्मक उपज पर मित्रता और विचारों के आदान-प्रदान के प्रभाव को दर्शाते हैं।

प्रतिभाशाली व्यक्ति को एक समझदार और सहानुभूतिपूर्ण श्रोता की ज़रूरत होती है जो उनके भीतर से सर्वश्रेष्ठ को निकाल सके। सोच सिर्फ एक अभ्यास नहीं है जो बिना किसी भावनात्मक समर्थन के चलती रहे।

विभिन्न क्षेत्रों में एक विचार को लागू करने और रूपकों व उपमाओं के अप्रत्याशित अनुप्रयोगों को प्राप्त करने, साथ ही कई स्तरों पर विचार करने और विभिन्न क्षेत्रों में एक विशेष दृष्टिकोण के निहितार्थों का अर्थ ढूँढ़ने ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि व्यक्ति, जिसका कोई एक दृष्टिकोण है, दूसरे सभी क्षेत्रों में क्या स्थान लेगा यदि वह अपने स्वयं के अनुरूप है, के विषय में काका साहब की टिप्पणी विचारों की दुनिया में विचारों की व्यवस्था और पुनर्व्यवस्था में उनकी गहन रुचि को इंगित करती है।

कार्ल आर रॉजर्स (1959) ने सर्जनात्मक प्रतिभाशाली व्यक्ति के इस गुण को 'तत्वों और अवधारणाओं के साथ खेलने की क्षमता' के रूप में वर्णित किया है। रॉजर्स इस प्रक्रिया की व्याख्या इस प्रकार करते हैं, "विचारों, रंगों, आकृतियों, सम्बन्धों के साथ सहज रूप से खेलने के लिए – तत्वों की असम्भव स्थिति को सुनियोजित करना, निराधार परिकल्पनाओं को आकार देना, किसी चीज़ को समस्यात्मक बनाना, हास्यास्पद को व्यक्त करना, किसी आकार को एक से दूसरे में परिवर्तित करना, असम्भव समकक्षों में बदलना।" रॉजर्स के अनुसार, इससे ही एक काल्पनिक अनुमान, जीवन को एक नए और महत्वपूर्ण तरीके से देखने का सर्जनात्मक दृष्टिकोण, उत्पन्न होता है।

गिलफर्ड (1956) के वर्गीकरण के अनुसार, मानसिक संचालन और उनके उत्पाद जो काका साहब की सोच की विशेषता बताते हैं, इस प्रकार हैं:

- जो असम्बन्धित प्रतीत होता है, उसके बीच नए सम्बन्धों को देखना;
- एक स्थिति को फिर से परिभाषित करना, जिसे गिलफर्ड द्वारा परिवर्तन कहा गया है;
- उन निहितार्थों को देखना जो प्रत्याशाओं, भविष्यवाणियों, ज्ञात और सन्दिग्ध पूर्ववृत्तों, सहवर्ती या परिणामों के रूप में जानकारी के बहिर्वेशन (extrapolation) हैं।

इन सभी का मौलिकता व सर्जनात्मकता से गहरा सम्बन्ध है और ये काका साहब की सोच में बहुलता से पाए जाते हैं, जैसा कि उन्होंने स्वयं वर्णन किया है।

यह संक्षिप्त वर्णन एक विचारक के मानस की एक झलक देता है। इसमें शिक्षक के लिए एक महत्वपूर्ण सन्देश है। क्या हमारा अध्यापन ऊपर वर्णित विचारधारा की ओर ले जाता है? क्या हमारे छात्र नए विचारों की चुनौती का सामना करते हैं, स्वयं सोचते हैं, स्वयं निष्कर्ष पर पहुँचते हैं या वे केवल पुस्तक और उसकी व्याख्याओं से बँधे रहते हैं? इससे भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यदि किसी शिक्षक को ऐसा छात्र मिलने का सौभाग्य प्राप्त होता है जो स्वयं सोचता है तो क्या वह शिक्षक उसे समझने और प्रोत्साहित करने में सक्षम है, या वह बँधे-बँधाए तरीके से कोई घिसी-पिटी राय देते हैं।

सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी (1922-2003): शिक्षा में सर्जनात्मकता की अनिवार्यता और महत्व, स्कूली शिक्षा में सर्जनात्मकता को सम्मिलित और प्रोत्साहित करने के लिए ज़रूरी शैक्षणिक सामग्री और पद्धतियों के निर्माण, विकास, प्रयोग और प्रसार में अग्रणी भूमिका निभाई। संगीत, कला, साहित्य, खेलों, ब्राह्मी जैसी प्राचीन लिपियों और विभिन्न धर्मग्रन्थों में उनकी रुचि और ज्ञान की झलक उनके सर्जनात्मकता से सम्बन्धित कार्य और लेखन में मिलती है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: अर्चना उपाध्याय: रूसी भाषा की अनुवादक और इंटरप्रेटर हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली की पूर्व छात्रा हैं और इससे पहले हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड, हैदराबाद में इंटरप्रेटर के रूप में काम कर चुकी हैं। दिल्ली में रहती हैं। सम्पर्क - archanaupadhyay.in@gmail.com

सभी चित्र: स्वाति कुमारी: बिहार के एक विस्थापित परिवार में जन्मीं स्वाति ने दिल्ली के कॉलेज ऑफ आर्ट से पेंटिंग में बी.एफ.ए. और अंबेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में एम.ए. किया है। उनकी खोज इस बात के इर्द-गिर्द घूमती है कि शरीर और स्थान कैसे कार्य करते हैं, प्रतिक्रिया करते हैं, बातचीत करते हैं और एक-दूसरे को प्रतिक्रिया देते हैं।

यह साक्षात्कार एजुकेशनल ट्रेंड्स, 1973, 8 (1-4) में प्रकाशित 'ए स्टडी इन द थिंकिंग प्रोसेस: एन इंटर्व्यू विद आचार्य काका साहब कालेलकर' का हिन्दी अनुवाद है।